Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIII (53), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

वैदिक सनातन परम्परा के 16 संस्कारो का अध्ययन

मनीष कुमार देवांगन*

* अतिथि व्याख्याता (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, रामचन्द्रपुर, जिला - बलरामपुर - रामानुजगंज (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – सनातन धर्म जितना प्राचीन है उतना ही वैज्ञानिक भी प्राचीन भारत में अनेक महान ऋषि हुए जिन्होने सनातन धर्म को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया। प्राचीन भारत में मानव जीवन को 100 वर्ष की आयु मानकर इसे 4 आश्रमो में – ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, और सन्यास आश्रमो में विभक्त कर दिया गया, और प्रत्येक आश्रम का मानव जीवन में विशेष महत्व था, इसी क्रम में पंच महायज्ञो की व्यवस्था भी धार्मिक जीवन में की गयी। पुरातन से ही भारतवर्ष का प्रमुख धर्म सनातन धर्म रहा है जो इस धर्म की प्राचीनता और और विशालता को बताता है, इसी पुरातन भारतीय धर्म में 16 संस्कारो के महत्व को भी बताया गया है, प्रारंभ में संस्कारो की संख्या चालीस थी लेकिन समय के बदलाव और लोगो की दिनचर्या में बढती व्यस्तता के कारण कई संस्कार धीरे–धीरे समाप्त होते चले गये, स्मृति ग्रंथ गौतम स्मृति में संस्कारो की संख्या 40 मानी गयी थी। महर्षि अंगिरा ने संस्कारो की संख्या 25 बतलाई, सर्वप्रथम 16 संस्कारो का वर्णन व्यास स्मृति में किया गया एवं धर्मशास्त्रों के अनुसार भी संस्कारों की संख्या 16 निश्चित की गयी। जो मानव जीवन के जन्म से मृत्य तक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है।

शब्द कुंजी – जीवन, संस्कार, सनातन धर्म, प्राचीन, पुरातन, ऋषि, आश्रम, अंत्येष्टि, शुभारंभ, लुप्त, मोक्ष।

प्रस्तावना – भारतीय धर्म जितना अधिक प्राचीन है उतना अधिक व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक प्राचीन ऋषियो ने मानव जीवन को चार आश्रमों में विभक्त कर मानव जीवन को सरल और सशक्त बनाने में योगदान दिया और पंच महायज्ञों के प्रतिपादन करने को लेकर मानव जीवन को धर्म से एवं धार्मिक कार्य से जोडने का प्रयास किया। भारतीय ऋषियों ने मानव जीवन को जन्म से मृत्यु तक 16 अलग अलग भागों में विभक्त किया जिसे इन्होने भारतीय परम्परा के 16 संस्कारो के नाम से परिचित कराया। संस्कार का आशय शुद्धीकरण संस्कार का आशय ऐसे धार्मिक कार्यो से है जो समाज में रहने वाले व्यक्ति को अपने समुदाय में रहने योग्य बनाने में सहयोग प्रदान करता है। प्राचीन भारत में मानव जीवन में संस्कारो का विशेष स्थान एवं महत्व था, जिसमें मानव आपने साथ समाज का भी कल्याण करता है।

वैदिक ग्रंथो में हमें संस्कार शब्द का प्रयोग देखने को नही मिलता। संस्कारो की जानकारी हमें स्मृति ग्रंथो से मिलती है। सबसे प्राचीन वेद ऋग्वेद में भी संस्कारो की जानकारी प्राप्त नहीं है, लेकिन कुछ सूक्तो में गर्भाधान, विवाह और अंत्येयिष्ट जैसे धार्मिक कार्यो की जानकारी प्राप्त होती है। सबसे अंतिम वेद अथर्ववेद में सूक्तो में वर्णित संस्कार जैसे गर्भाधान, विवाह और अंत्येयिष्ट संस्कारो का पहले की तुलना में ज्यादा वर्णन मिलता है। गृहसूत्र में सर्वप्रथम संस्कारो की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

प्राचीन भारत में मनुष्य के प्रत्येक कार्य का शुभारंभ संस्कार से होता था, इस समय संस्कारो की कुल संख्या 40 के लगभग थी। बदलते समय के साथ लोगो के जीवन में व्यस्ता भी बढ़ती गयी जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति इन संस्कारों के पालन में समस्या आने लगी, जिसके कारण अनेक संस्कार समय के साथ लुप्त होते गए। स्मृति ग्रंथ गौतम स्मृति में प्रथम बार 40 संस्कारो की संख्या का निर्धारण किया गया। स्मृति ग्रंथ व्यास स्मृति में मानव जीवन से संबंधित सोलह संस्कारो की बात कही गयी। अलग अलग धर्मग्रंथों में संस्कारों के क्रम में भिन्नता देखने को मिलती है।

सोलह संस्कारो को मुख्य रूप से चार भागों में बांटा गया है–

पहला – जन्म से पूर्व के संस्कार – गर्भाधान, पुंसवन, सीमान्तोनयन

दूसरा – बाल्यावस्था संस्कार – जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म और कर्णविध।

तीसरा – शिक्षा संस्कार – विद्यारंभ, उपनयन, वेदारंभ, केशांत (गोदान) और समावर्तन।

चौथा – गृहस्थ एवं अंतिम संस्कार – विवाह, अंत्येष्टि।

सोलह संस्कारो का क्रम –

1. **गर्भाधान संस्कार –** सोलह संस्कारों में गर्भाधान पहला संस्कार माना गया हैं, मनुष्य अपने जीवन के दूसरे आश्रम गृहस्थ आश्रम में प्रवेश के साथ वैवाहिक जीवन में प्रवेश करता है, गृहस्थ जीवन में मानव का एक मात्र उद्देश्य संतान की प्राप्ति होता है,गर्भाधान के लिए उपयुक्त समय रात्रि का माना गया है। यह संस्कार महत्वपूर्ण समझा जाता था गर्भाधान संस्कार के बाद ही अन्य संस्कारों का क्रम आता है।

संतान गोपाल मंत्र–

'ऊँ श्रीं क्लीं ग्लौं देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते देहि में तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः।'

(हरिवंश पुराण या कृष्ण संबंधित स्त्रौत संग्रहां गत)

2. **पुंसवन संस्कार –** माता के गर्भ में पल रहे शिशु के उत्तम स्वास्थ और उसे गुणवान बनाने वाला संस्कार। गर्भाधान संस्कार के तीसरे महीने में पुत्र प्राप्ति के निमित्त उद्देश्य से यह संस्कार किया जाता था। इस समय शिशु की माता को अच्छी पुस्तको का अध्ययन करना चाहिए, साथ ही अच्छे वातावरण

में रहना चाहिए तथा माता अपना विचार सदैव सकारात्मक रखे इस सकारात्मक विचारो का प्रभाव शिशु पर पडेगा। चन्द्रमा के पुष्य नक्षत्र में होने पर यह संस्कार किया जाता है।

मंत्र –

'ऊँ पुमानग्नि: पुमानिन्द्र: पुमान् देवो बृहस्पति:।
पुमांसं पुत्रं विन्दस्व तं पुमान्नु जायताम्।' (ऋग्वेद)

3. सीमान्तोनयन संस्कार – माता के गर्भ में पल रहे शिशु के मानसिक विकास के लिए। यह संस्कार बालक के जन्म के पहले तीसरा संस्कार है, इस समय माता के गर्भ में पल रहे शिशु की आयु लगभग पाँच माह तक हो जाता है और इस समय शिशु में मष्तिष्क का विकास प्रारंभ होता है जिससे शिशु के सिर का विकास होता है। इसका मुख्य उद्देश्य सौभाग्य की प्राप्ति होता है साथ ही गर्भवती महिला के गर्भपात का रोकना और गर्भवती की रक्षा करना जिससे गर्भ में पल रहे शिशु के विकास में सहयोग मिले। यह संस्कार पुंसवन संस्कार का विस्तार है। इस संस्कार के द्वारा गर्भवती स्त्री को मानसिक बल के साथ सकारात्मक विचारों से पूर्ण रखना होता है, इस समय तक गर्भस्य शिशु का अंग प्रत' बन जाते है। इस संस्कार के माध्यम से शिशु को बुरी आत्माओ और प्रेतात्माओ से रक्षा का प्रयास किया जाता है।

मंत्र –

'ऊँ येनादिते: सीमानं नयाति प्रजापतिर्महते सौभाग्य
तेनाहमस्यौ सीमानं नयामि प्रजामस्यै जरदष्टिं कृणोमि'। (ऋग्वेद)

4. जातकर्म संस्कार – शिशु के जन्म के बाद का प्रथम संस्कार। इस संस्कार को बालक के नाल काटने के पहले ही किया जाता है और बालक के पिता द्वारा बालक को आर्शीवाद प्रदान किया जाता। शिशु के जन्म के बाद उसे घी या शहद चटाया जाता है, फिर शिशु को प्रथम बार माता का दूध पिलाया जाता है। मनुस्मृति में इस संस्कार का वर्णन इस प्रकार किया गया है – प्रांग नाभिनर्धनपतु सो जातकर्म विधियते। मंत्रैचत्प्रशनम चस्य हिरण्य मधु सर्पिशम्।। लेकिन वर्तमान समय में यह संस्कार इस तरीके से सम्पन्न नहीं हो सकता जिसके कई कारण है जैसे कि प्रसूति के समय होने वाले के कारण वर्तमान में अधिकांश प्रसूति अस्पतालों में करायी जाती है, जहाँ पिता का प्रवेश संभव नहीं होता।

मंत्र –

'ऊँ यज्ञ आयुष्मान्तस दक्षिणभि: आयुष्मन्तसतेपत्व आयुष्मन्तम करोमि।
आयुष्मन्तसतेनत्व आयुष्मन्तय करोमि'। (कुष्ण यजुर्वेद)

5. नामकरण संस्कार – शिशु का नाम रखा जाता है। शिशु के जन्म के दसवे या बारहवें दिन यह संस्कार संपादित किया जाता है, क्योंकि मानव जीवन में नाम का अधिक महत्व है नाम ही किसी व्यक्ति की पहचान है अत: बालक का नामकरण धार्मिक विधि अनुसार किया जाता है। मनु के आधार पर बालक का नाम उसके वर्ण का सूचक होना चाहिए, पुराण (विष्णु पुराण) में वर्णन मिलता है कि ब्राम्हण वर्ण अपने नाम के अंत में शर्मा, क्षत्रिय वर्ण वर्मा, वैश्य वर्ण गुप्त और शुद्र वर्ण दास जैसे सम्बोधन को लिख सकते है। वर्तमान में इस संस्कार के रूप में हमें परिवर्तन देखने को मिलता है। वर्तमान में नाम रखने में अधिक विचार न करते हुए नयेपन का आभास देने वाले नाम रखे जाते है। बालक के नाम रखते समय मनोवैज्ञानिक तथ्य पर जरूर ध्यान देना चाहिए की बालक का नाम पुकारते समय गौरव और सम्मान का अनुभव हो। अत: हमारे मुनियो ने इस संस्कार को विधि विधान से ग्रह और नक्षत्र की स्थिति को ध्यान में रखकर संपादित करने पर अत्यधिक बल दिया है।

मंत्र –

नामधेयं दशम्यं तु द्वादश्यां वाड्स्य कायत्।
पुण्ये तिथौ उत्सवे वा नक्षत्रे वा गुणान्विते। (मनुस्मृति अध्याय द्वितीय श्लोक संख्या 2.30)

6. निष्क्रमण संस्कार – बालक को पथम बार सूर्य और चन्द्र के दर्शन कराना। यह संस्कार बालक के जन्म के तीसरे से चौथे माह में किया जाता है। शिशु जन्म से पूर्व माता के गर्भ में नौ माह रहता है फिर वह बाहर के वातावरण में निकलता है जो शिशु के लिए गंभीर भी हो सकता है, इस कारण शुभ नक्षत्र में बालक को सूर्य और चन्द्र के दर्शन कराया जाता है। शिशु का शरीर पांच तत्वों पृथ्वी, जल, तेज,वायु, आकाश से बना है, अत: शिशु का पिता इस संस्कार के माध्यम से पंचभूतों के देवों से शिशु के कल्याण की कामना करता है।

मंत्र –

शिवे ते स्तां द्यावापृथिवी असन्तापे अभिश्रियौ शं ते सूर्य आ तपतु शं वातो वातु ते हृदे।
शिवा अभि क्षरन्तु त्वापो दिव्या: प्यस्वती:।(अथर्ववेद, 18वें काण्ड, दूसरे सूक्त का 36 मंत्र)

7. अन्नप्राशन संस्कार – शिशु को प्रथम बार अन्न का सेवन कराया जाता है। अन्नप्रासन का अर्थ होता है अनाज के सेवन की शुरूआत करना। बालक के जन्म के छठे महीने में यह संस्कार सम्पन्न किया जाता था, इस समय तक शिशु का पाचन तंत्र मजबूत होने लगता है जिसके कारण इस संस्कार में बालक को प्रथम बार पका हुआ भोजन (अन्न) खिलाया जाता है, इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य यह है कि बालक उचित समय में माता का दूध पीना त्याग कर अन्न से स्वयं निर्वाह करने योग्य बन जाये।

मंत्र –

शिवौ ते स्तां व्रीहियवावबलासावदोमधौ।
एतौ यक्ष्मं वि वाधेते एतौ मुञ्चतो अंह:। । (अथर्ववेद 8.2.18)

8. चूड़ाकर्म संस्कार – सिर का बाल काटना। इस संस्कार में बालक का पहली बार बाल काटकर चोटी रखी जाती है, बालक के मुडंन के बाद नये वस्त्रो की व्यवस्था की जानी चाहिए। गुठे ऑटे या गोबर का प्रबंध करना चाहिए जिससे बालक के बाल को एकत्र किया जा सके, यह संस्कार वैदिक काल से वर्तमान तक प्रचलित है। इस संस्कार के द्वारा बालक की मानसिक शक्ति को बढाने, खोपडी की त्वचा को स्वस्थ रखने तथा मष्तिष्क विकास के लिए किया जाता है। यह संस्कार शुभ मुहुर्त पर सम्पन्न किया जाता है, इस अवसर पर गौरी–गणेश, विष्णुऔर नवग्रह देवताओं की पूजा अर्चना की जाती है। बालक का मुंडन होने के पश्चात् सिर पर दही या मक्खन का लेप लगाया जाता है और इसके बाद बालक को स्नान कराया जाता है।अथर्ववेद में बालक के हजामत करने के तरीको को स्पष्ट किया गया है। इस संस्कार का महत्व यह है कि इस संस्कार के माध्यम से अतीत की अशुद्धियों को समाप्त कर नये जीवन का प्रतीक है।

मंत्र –

'चूड़ाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मत:।
प्रथमेडबडे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुतिचोदनात्।' (मनुस्मृति 2.35)

9. कर्णवेध संस्कार –कान छिदवाना। प्राचीन भारत के ऋषियो ने सभी संस्कारो को वैज्ञानिक आधार पर परखने के बाद प्रारंभ कियां इस संस्कार

में बालक के कानों को छेदा जाता है यह संस्कार पाँच वर्ष की अवस्था में किया जाता है। इस संस्कार से बालक में बौद्धिक विकास होने के साथ सेहत संबंधी अनेक लाभ भी मिलते है। कान छिदवाने के अनेक कारण होते है इसमें कुण्डली में राहु और केतु का प्रभाव नष्ट होता है, नेत्रों की तेज होती है, सुनने की क्षमता में वृद्धि होती है। इस संस्कार से नकारात्मक शक्तियों का प्रभाव कम होता है और मश्तिष्क में रक्त का प्रवाह समुचित रूप से होता है। इस संस्कार को करने से पहले ईष्टदेव, देवी-देवताओं आह्वान किया जाता है। सुश्रुत संहिता में कहा गया है कि कर्णभेद संस्कार से अण्डकोष वृद्धि, आन्त्रवृद्धि जैसे रोगो से बालक को लाभ मिलता।

मंत्र –

भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम देवा भद्रं प्श्येमाक्षभिर्यजत्रा:।
स्थिरैरंगैसतुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायु:।(ऋग्वेद 1.89.8)

10. विद्यारंभ संस्कार – बालक के औपचारिक शिक्षा की शुरूआत। सभी अभिभावक का यह कर्तव्य होता है कि संतान के जन्म के बाद आई समस्त जिम्मेदारियो का निर्वहन स्वयं करे, जिसमें बालक के लिए भोजन, शिक्षा की व्यवस्था करना। बालक के लिए शिक्षा का प्रबंध न करने वाले परिजन अपराधी के श्रेणी में आते है, सभी परिजन अपने बालक की शिक्षा का सामर्थ्य पूर्ण प्रबंध करते है, शिक्षा का उद्देश्य जीवन निर्माण करना होता है। इस संस्कार के माध्यम से पिता यह बताता है कि वह अपने कर्तव्य और जिम्मेदारियों को भूला नहीं है, शिक्षा के माध्यम से बालक अपने जीवन निर्माण की दिशा में आगे बढ़ता है। विद्याआरंभ संस्कार के लिए पहले पूजन का कार्य किया जाता है जिसमें गणपति और माता सरस्वती की प्रतिमाएं रखी जाती है, पूजन कार्य के लिए पट्टी, दवात एवं लेखनी की व्यवस्था की जाती है, गुरू की पूजा के प्रतीक चिन्ह के रूप में श्रीफल रखा जाता है।

मंत्र –

सरस्वति नमस्तुभ्यं वरदे कामरूपिणि।
विद्यारम्भं करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा।। ('सरस्वती स्त्रौत')

11. उपनयन संस्कार – जनेउ धारण करवाना, गुरू के समीप शिक्षा हेतु ले जाना। उपनयन का शाब्दिक अर्थ होता है गुरू के पास ले जाना, जिससे बालक पूर्ण ज्ञान प्राप्त करन का अधिकारी बन जाता है। अलग अलग वर्णो के लिए उपनयन संस्कार की आयु भी अलग अलग हैं। उपनयन संस्कार संपादित होने के बाद से बालक का प्रथम आश्रम ब्रम्हचर्य आश्रम मे प्रवेश माना जाता है। यह संस्कार सम्पन्न होने के उपरांत बालक अपनी शिक्षा पूर्ण करने तक ब्रम्हचर्य जीवन व्यतीत करता है तथा भिक्षा मांगकर अपना और अपने गुरू का निर्वाह करता है। उपनयन संस्कार को क्षेत्रीय भाषा में अलग-अलग नामों से जाना जाता है। जैसे - गुजराती में जानोइ, मराठी में मुंज, बांग्ला में पैते, सिंधी में जन्या आदि।वैदिक साहित्य ग्रंथो में उपनयन संस्कार का उल्लेख प्राप्त होता है।

मंत्र –

ऊँ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुच्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेज:।(पारस्कर गुहसूत्र 2.2.11)

12. वेदारंभ संस्कार – बालक द्वारा वेदो का अध्ययन प्रारंभ करना। वेद का आशय है ज्ञान और इस संस्कार के माध्यम से बालक अपने अंदर ज्ञान को समाविष्ट करने का अधिकारी बन जाता है। ज्ञान ज्योति के उस प्रकाश की भांति है जो कभी क्षीण नहीं हो सकती। इस संस्कार के पूर्व गुरू अपने शिष्य को संचमित जीवन जीने की और ब्रम्हचर्य का पालन करने की प्रतिज्ञा कराता है। व्यास स्मृति में इस संस्कार का प्रथम बार उल्लेख मिलता है, वेदों का अध्ययन गायत्री मंत्र के साथ किया जाता है। उपनयन संस्कार के बाद बालक वेदो के अध्ययन का अधिकारी बन जाता है, साथ ही गुरूकुल में वेदो और धर्मशास्त्रों के अध्ययन की शुरूआत होती है, जिससे बालक में ज्ञान और आध्यात्म का विकास होता है।

मंत्र –

ऊँ अग्नि आया ही विटे ग्रानानो दाताओ
निहोता सत्सी बिरहाशी। 3 ('सामवेद')

13. केशांत (गोदान) संस्कार – बालक द्वारा प्रथम आश्रम ब्रम्हचर्य आश्रम की समापित पर। गुरूकुल में रहकर ब्रम्हचर्य जीवन का पालन करते हुए बालक गुरू के मार्गदर्शन में वेद-पुराणो के साथ धर्मशास्त्रों का ज्ञाता बन जाता है।केशांत संस्कार सोलह संस्कारो में तेरहवाँ संस्कार माना जाता है जो बालक के किशोरावस्था 16 वर्ष की आयु में अपनी गुरूकुल शिक्षा पूर्ण कर लेने के पश्चात् पथम बार दाढी-मूँछ बनायी जाती है जिसके कारण इसे केशान्त संस्कार कहा जाता है, तथा बालक को स्नातक की उपाधि दी जाती है। गुरूकुल शिक्षा पूर्ण होने पर बालक अपने गुरू को गुरू दक्षिणा के रूप में एक गाय दान करता है जसके कारण इसे गोदान संस्कार भी कहा जाता है।

मंत्र –

ऊँ यत्क्षौरेण मलिनाय मलिनाय शिखिनां केशानां श्मश्रूणां संस्कर्ता।

14. समावर्तन संस्कार – बालक द्वारा गुरू के आश्रम से शिक्षा पूर्ण करने के उपरांत घर लौटना। समावर्तन का अर्थ है गुरू के आश्रम से अपने गृह वापस लौटता है। गुरू के आश्रम से विदाई लेने के पहले शिष्य का समावर्तन संस्कार किया जाता है, इस संस्कार के पूर्व केशांत संस्कार सम्पन्न किया जाता है बालक को सुगंधित औपधियों से निर्मित जल से भरे आठ घड़ो के जल से स्नान कराया जाता था एवं गुरू अपने शिष्यों को जाने वाले अगले आश्रम (गृहस्थ जीवन) के लिए सत्य बोलने, धर्म का पालन हेतु उपदेश देते है।

मंत्र –

सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमद:। ('तैतरीय उपनिषद्')

15. विवाह संस्कार – सभी संस्कारो का मूल विवाह संस्कार है, इस संस्कार के माध्यम से ही व्यक्ति धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति करता है। हिन्दू विधि के अनुसार विवाह एक पवित्र एवं धार्मिक संस्कार माना जाता है जिसमें दो आत्माओं का मिलन सामाजिक स्वीकृति उपरांत अग्नि को साक्षी मानकर गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते है।विवाह संस्कार केवल शारीरिक सुख की प्राप्ति नही वरन् दो परिवारो का आपस में जुडाव है, विवाह के उपरांत संतान प्राप्ति कर वंश को आगे बढ़ाया जाता है। हिन्दू समाज और संस्कृति में विवाह कभी न टूटने वाला पवित्र बंधन है, विवाह के माध्यम से वर-वधू अपने स्वयं के अस्तित्व को भूलकर एक सम्मिलित ईकाई का निर्माण करते है।

मंत्र –

ऊँ गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथास:।
भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवा:। ऋग्वेद संहिता(10.85.36)

16. अंत्येष्टि संस्कार – मोक्ष प्राप्ति के बाद शरीर का अंतिम संस्कार। यह

मानव जीवन का अंतिम संस्कार है इसके बाद कोई संस्कार शेष नहीं बचता, मृत्यु के उपरांत मृत आत्मा की शांति एवं नश्वर शरीर को पंचतत्व में विलीन किया जाता है, यह संस्कार मृत शरीर को पूरे सम्मान के साथ विदा कर आत्मा को मोक्ष यात्रा में सहायता करती है। यह संस्कार मानव द्वारा इस भू मण्डल पर बिताए गये जीवन का अंतिम संस्कार है यह संस्कार व्यक्ति के देह त्याग के बाद परिजनों द्वारा संपादित किया जाता है। हिन्दु रिवाज के अनुसार व्यक्ति के मरने के बाद उसे लकडियों के ढेर पर लिटा कर मुखाग्नि दे कर इस नश्वर संसार से विदाई दी जाती है। मृत व्यक्ति की आत्मा की शांति के लिए ब्राम्हणो को भोजन कराया जाता है दान दिये जाते है और काशी जाकर पिंडदान किया जाता है।

मंत्र –

ऊँ यमाय सोमं सुनुत ए यमाय जुहुता हवि:।
यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंकृत: स्वाहा।(ऋग्वेद 10.14.1)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुरू आदि शंकराचार्य श्री ब्रम्हसूत्र भास्य सन् 1910 प्रकाशक श्री वाणी विलास प्रेस श्रीरंगम, तमिलनाडु अ.1 म. पृ.10।
2. सरस्वती दयानन्द ऋग्वेद भास्य प्रकाशक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली म. 10 पृ. 124।
3. सरस्वती दयानन्द ऋग्वेद भास्य प्रकाशक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली मण्डल 5 म. 75 पृ. 140।
4. आचार्य जयराम पारास्कर गृहसूत्राणि सन 1851 प्रकाशक खेमराज श्री कृष्णदास मालिक श्री वेंकेटेश्वर टीम प्रेस, मुम्बई अ. 02 सूत्र 05 पृष्ठ 36।
5. आचार्य जयराम पारास्कर गृहसूत्राणि सन 1851 प्रकाशक खेमराज श्री कृष्णदास मालिक श्री वेंकेटेश्वर टीम प्रेस, मुम्बई अ. 02 सूत्र 06 पृष्ठ 36।
6. आचार्य जयराम पारास्कर गृहसूत्राणि सन 1851 प्रकाशक खेमराज श्री कृष्णदास मालिक श्री वेंकेटेश्वर टीम प्रेस, मुम्बई अ. 02 सूत्र 08 पृष्ठ 38।
7. मिश्र मित्र श्री वीर मित्रोंदय: सन 1913 चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस, वाराणसी पृष्ठ 19।
8. कुमार डॉ. सुरेन्द्र प्रोफेसर विशुद्ध मनुस्मृति 1996 प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, खारी बावली दिल्ली अ. 2 श्लोक 26 पृष्ठ 80।

****